कबीर के सामाजिक सरोकार

***डॉ. बिजेन्द्र कुमार सोनी**

भक्तिकाल की संत काव्यधारा के प्रमुख कवि कबीर के सामाजिक सरोकार अत्यन्त गहरे हैं। इन्हीं सामाजिक सरोकारों को लेकर हिन्दी जगत् में काफी मतभेद हैं। कबीर की कविता और उसके तात्पर्यों की मनमानी व्याख्याएँ हो रही हैं। कोई उन्हें हिन्दू सिद्ध करने पर तुला है, तो कोई दलित। कोई कबीर को 'ना हिन्दू ना मुसलमान' कहता है तो कोई संत। कबीर के जीवन को लेकर भी तरह–तरह की अटकलबाजी होती रही है। कोई उन्हें जुलाहा सिद्ध करता है, तो कोई कोरी। कोई उन्हें ब्राह्मण विधवा का पुत्र बताता है, तो कोई मुसलमान। कबीर को लेकर यह राजनीति और खींचतान नई बात नहीं है। आचार्य शुक्ल से लेकर आज तक की आलोचना में यह प्रपंच देखा जा सकता है। कबीर किस जाति के थे? उनका संबंध किस सम्प्रदाय से था? जैसे महत्वहीन मुद्दों के बजाय हमें इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि कबीर की कविता की सामाजिक उपयोगिता क्या है? कबीर मनुष्य की बेहतरी के लिए क्या कहते हैं? मेरा दृढ़ मत है कि कबीर को हिन्दू या मुसलमान सिद्ध करना ही कबीर के विरोध में खड़ा हो जाना है। जो संत सम्प्रदाय, जाति और वर्ण पर आधारित भेद–भाव को अस्वीकार करता हो, उसके संदर्भ में इस तरह की चर्चा के कोई मायने नहीं है, बल्कि इन चर्चा करने वालों के संकीर्ण दायरे और उनकी साम्प्रदायिक सोच पाठक के सामने चीख–चीख कर पुकारने लगती है कि हम हैं मानवता के कट्टर विरोधी। कबीर.....अर्थात् मानवता। कबीर अर्थात् आत्मा का सत्य।

कबीर का सपना धर्म, सम्प्रदाय, जाति, वर्ग एवं वर्ण पर आधारित समाज का नहीं था। कबीर के स्वप्न का समाज रूपी भवन इन्सानियत की नींव पर खड़ा है। उनके स्वप्न का समाज सार्वभौम मानव समाज है जो वर्ग रहित है, सम्प्रदाय रहित है, जाति रहित है। कबीर कहते हैं–

"तू तुरक तुरकनि जाया तो भीतर खतना क्यों न कराया।
तू हिन्दु हिन्दुस्आनी जाया तो आन बाट क्यों नहीं आया।।"

स्पष्ट है, कबीर के मानव–मानव में कोई भेद नहीं है। जाति–व्यवस्था की क्रूरता को पहचान कर कबीर इसका विरोध करते हुए कहते हैं–

जाति–पाँति पूछे नहीं कोइ। हरि को भजे सो हरि को होइ।।

वे कहते हैं 'दुई जगदीश कहाँ ते आये?' नाम बदलने से अर्थ नहीं बदलता। उस एक ही नूर से सभी पैदा हुए हैं। अतः उनके समाज में हिन्दू–मुसलमान जैसा विभाजन नहीं, सवर्ण–असवर्ण जैसा विभाजन नहीं। समाज समता, न्याय और बंधुत्व की भावना पर आधारित है। वें पूंजीपतियों की तरह संपत्ति को इकट्ठा करने या जोड़ने पर बल नहीं देते। वे समाज में सबके पालन–पोषण के पक्षधर हैं। अपरिग्रह के विश्वासी हैं–

साँई इतना दीजिए जामे कुटुम समाय। आप न भूखा रहि सके, साधु न भूखा जाए।।

ईश्वर के आधार पर मानवों के बँटने और लड़ने का वे विरोध करते हैं। राम और अल्लाह के नाम पर फैले विद्वेष और घृणा को समाप्त कर देना चाहते हैं। वे कहते हैं–

एक निरंजन अलह मेरा, हिन्दू तुरूक दुँहू नही मेरा न हज जाऊँ न तीरथ पूजा, एक पिछानिया तौ क्या दूजा

एक निराकार ब्रह्म को मानने वाले कबीर बहु देवोपासना, मूर्तिपूजा, तीर्थ यात्रा, व्रत, नमाज, रोजा और बाँग देने आदि सभी बाह्य आडम्बर एवं कर्मकाण्डों का विरोध करते हैं। क्योंकि ये सारे क्रियाकलाप मानव के शोषण के हथियार बन गये हैं। वेद, शास्त्र, कुरान आदि को पण्डाओं एवं मुल्लाओं ने शोषण का माध्यम बना लिया है, इसीलिए वे कहते हैं–

पाहन पूजे हरि मिले, तो मैं पूजू पहार।याते वो चाकी भली पीस खाय संसार।।

मूंड मुडाये हरि मिलै, तो सब कोई लेय मुडाय। बार–बार के मूड ते भेड़ बैकुण्ठ न जाय।।
काँकर–पाथर जोरि के मस्जिद लई चिनाय। ता चढ़ मुल्ला बांग दे, क्या बहरा हुआ खुदाय।।

कबीर ने उन समस्त व्यवस्थाओं और सत्ताओं का विरोध किया, जो मानव के शोषण का माध्यम बनी। या कहें जो मानव–मानव में भेद उत्पन्न करती हैं। उनका स्पष्ट मत है–

एक बूंद एकै मल–मूतर, एक चाम एक गूदा। एक जोति में सब उत्पन्ना, कौन ब्राह्मण को सूदा।।

इसीलिए कबीर आज भी प्रासंगिक हैं। हम मध्यकाल में भी सम्प्रदाय, वर्ग जाति और वर्ण के आधार पर झगड़ रहे थे और आज भी झगड़ रहे हैं। क्या मध्यकाल से लेकर आज तक हमने कोई प्रगति नहीं की? क्या सभ्यता का कोई विकास नहीं हुआ? आज भी हमारे मन में वह पुराना जहर और भी फैलता जा रहा है। हम पहले से अधिक साम्प्रदायिक हो गये हैं? यदि ऐसा नहीं है तो फिर क्यों 'गोधरा काण्ड' होते हैं? क्यों मन्दिर–मस्जिद के नाम पर हजारों लोग मारे जाते हैं? यदि हमारे जेहन में साम्प्रदायिकता का जहर नहीं है, तो फिर कोई औकात नहीं उन नेताओं की जो वोट की राजनीति के लिए हमें लड़ाते हैं।

प्रवक्ता हिन्दी विभाग, ज.गु.रा.रा.स.वि., जयपुर।

वे जानते हैं हमारी कमजोरियों को, वे पहचानते हैं हमारे भीतर कुण्डली मार कर बैठे साम्प्रदायिकता के नाग को, जो बात–बात पर फुँफकार उठता है। अतः कबीर, जो सच्चे अर्थों में मानवता के पुजारी हैं। उनकी शिक्षाओं और विचारों की पुनः आवश्यकता है। यदि हम कबीर को सही अर्थों में समझकर, उसके बताये रास्ते पर चलें, तो निश्चय ही भारत में एक ऐसे समाज का निर्माण हो सकता है। जहाँ धर्म, सम्प्रदाय, जाति, वर्ग, वर्ण आदि के आधार पर कोई भेदभाव न हो। जहाँ ईश्वर को लेकर कोई झगड़ा न हो। जहाँ आध्यात्मिकता एवं प्रेम का साम्राज्य हो। कबीर का जीवन दर्शन सिर्फ साम्प्रदायिक एवं जातिगत भेदभावों को दूर करने तक ही सीमित नहीं है। वे समग्र जीवन में आनन्द एवं आध्यात्मिकता के पक्षधर हैं। कबीर की यह आध्यात्मिकता एवं आनन्द की धारणा आज के तनाव भरे पूंजीवादी युग में अत्यन्त प्रासंगिक है। वे कहते हैं–

देह धरे को दण्ड है सब काहू को होय। ज्ञानी भुगते ज्ञान कर, मूरख भुगते रोय।।

आज हम मूर्ख बने रो–रो कर जीवन को काट रहे हैं। जीवन के संघर्षों, कठिनाइयों और पीड़ाओं को सहज भाव से न लेकर उनसे त्रस्त और पस्त हैं। ऐसे में कबीर की वाणी हमें जीने का माद्दा देती है। भौतिकवाद की अंधी दौड़ में शामिल लोगों से कबीर कहते हैं–

गउ धन, गज धन, बाज धन और रतन धन खानि

जब आवै संतोष धन, सब धन धूरि समान। आज इस भौतिकवादी युग में से संतोष गायब है। सब धन के पीछे भाग रहे हैं और अपने जीवन को नारकीय बना रहे हैं। मैं यहाँ उन्नति, प्रगति और विकास का विरोधी नहीं हूँ। यह सब जरूरी है परंतु किस कीमत पर? घर, परिवार, स्वास्थ्य आदि को खो कर यदि धन प्राप्त हुआ तो वह किस काम का? कबीर श्रम का विरोध नहीं करते हैं। बल्कि वे एक ऐसे समाज की कल्पना करते हैं जहाँ सभी अपने–अपने सामर्थ्य के अनुसार श्रम करें और उन्हें उनकी आवश्यकतानुसार धन मिले। वे कहते हैं–

''उदर समाता अन्न ले, शरीर समाता चीर। अधिक ही संग्रह न करे, ताका नाम फकीर।।

कबीर अत्यधिक संपत्ति के संचय को ठीक नहीं मानते हैं। वे उसका समाज में वितरण करने को ही सज्जनता मानते हैं–

''जो जल बाढ़े नाव में घर में बाढ़े दाम। दोनों हाथ उलीचिए, यही सयानो काम।।''

इस प्रकार वे पूंजीपतियों के धन का श्रमिकों में वितरण करा देना चाहते थे। ताकि गरीबों की आर्थिक स्थिति में भी सुधार हो सके। वे समाज में सबको समान करने के पक्ष में हैं। इसीलिए उन्होंने परस्पर सत्य में से सत्य और रोटी में से टुकड़ा बाँट लेने की सलाह दी है–

''सत ही में सत बाँटई, रोटी में ते टूक। कहें कबीर ता दास को, कबहू न आवे चूक।।

इस प्रकार कबीर ने राज्य, समाज, धर्म आदि की विषमताओं को दूर करने की बात कही। उन्होंने हर प्रकार के शोषण एवं दासता का विरोध किया। जैसे पुरूषों की नारियों पर लादी गई दासता, सवर्णों की अस्पृश्यों पर दासता, धनिकों की गरीबों पर दासता, साहूकार की कर्जदार पर दासता, ज्ञानियों के द्वारा अज्ञानी जनता पर लादी हुई दासता आदि का विरोध कर कबीर ने सर्वत्र समत्व, भ्रातृत्व, प्रेम, अहिंसा और सत्य का प्रचार और प्रसार कर मानवता के मार्ग पर चलने की बात कही।

नारी के प्रति अनुदार दृष्टि का आरोप भी कबीर पर लगता है। कबीर ने नारी को महाठगिनी और माया माना है, जो आध्यात्मिकता के मार्ग में बाधा बनती है। कबीर ने कहा–

''नारी की झाँई परत, अंधा होत भुजंग। कबीरा तिन की का गति, जो नित नारी के संग।।''

यदि कबीर का नारी के संदर्भ में यही दृष्टिकोण है तो वह ग्राह्य नहीं है और कबीर का विचार निंदनीय है परंतु कबीर ने कहीं–कहीं नारी की निंदा का विरोध किया है। वे कहते हैं–

नारी की निन्दा मत करो, नारी नर की खान। नारी से नर होत है, ध्रुव प्रहलाद समान।।

कबीर ने वेश्यावृत्ति बंद करने पर जोर दिया और काम वासना में प्रवृत स्त्री और पुरूष दोनों को दोषी माना–
'नर नारी दोउ नरक है, तब लग देह सकाम'

परंतु कबीर ने एक परमात्मा की सत्ता में विश्वास किया और स्त्री–पुरूष सब को उसी का अंश माना–
'जेती औरति मरदा कहिए, सब में रूप तुम्हारा'

अतः नारी के संदर्भ में भी कबीर का दृष्टिकोण कहीं–कहीं अनुचित नहीं जान पड़ता है।

अन्ततः यही कहा जा सकता है कि मानवता के प्रतिष्ठापक कवि कबीर के गहरे सामाजिक सरोकार रहे हैं। वे समाज में व्याप्त हर प्रकार के भेदभाव एवं शोषण के विरोधी हैं। ऐसे महान् व्यक्तित्व को हिन्दू और मुसलमान की दृष्टि से नहीं समझा जा सकता है। उन्हें हिन्दू या मुसलमान सिद्ध करना घोर अन्याय है। सर्वथा अनुचित एवं त्याज्य है। वे सच्चे अर्थों में मानवता के पोषक कवि हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :– 1. पूरा कबीर सं. बलदेव बंशी 2. कबीर हजारी प्रसाद द्विवेदी 3. कबीर के आलोचक डॉ. धर्मवीर 4. कबीर ग्रंथावली डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल 5. कबीर ग्रंथावली डॉ. श्याम सुन्दरदास 6. भक्तिकाल एवं भक्ति आंदोलन शिवकुमार मिश्र